[2020] 9 एस.सी.आर.482

महेश्वर तिग्गा

बनाम

झारखंड राज्य

(2020 की आपराधिक अपील संख्या 635)

सितम्बर 28, 2020

[आर. एफ. नरीमन, नवीन सिन्हा और

इंदिरा बनर्जी, जे.जे.]

दंड संहिता, 1860:

एसएस.376, 323 और 341 – के तहत अभियोजन – आरोप है कि आरोपी ने 4 साल पहले चाकू की नोंक पर पीड़िता के साथ बलात्कार किया जब वह 14 साल की थी और शादी के बहाने उसके साथ शारीरिक संबंध बनाना जारी रखा। – निम्न न्यायालयों द्वारा दोषसिद्धि – सर्वोच्च न्यायालय में अपील – माना गया: अभियोक्ता की उम्र के संबंध में साक्ष्य में व्यापक भिन्नता है – ट्रायल कोर्ट ने घटना की तारीख के आधार पर अभियोक्ता की आयु 14 वर्ष पाई थी उसके बयान के बारे में – उसकी उम्र के संबंध में सकारात्मक साक्ष्य के अभाव में, उसकी उम्र 18 वर्ष से अधिक होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है – संदेह का लाभ आरोपी को मिलता है – धारा के तहत आरोपी से पूछताछ की जा रही है। 313 सी.आर.पी.सी. लापरवाही और लापरवाही थी – एफआईआर दर्ज करने में 4 साल की देरी आरोपों की सच्चाई और सत्यता के बारे में गंभीर संदेह पैदा करती है – मामले के तथ्यों में यह नहीं माना जा सकता है कि आरोपी ने शुरू में उसे डर में डालकर उसकी सहमति प्राप्त की थी या बाद में ली थी अभियोक्त्री के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए धोखाधड़ी से गलत बयानी की गई – अभियोक्ता की सहमति सचेत और जानबूझकर पसंद की गई थी – दोषसिद्धि टिकाऊ नहीं है।

धारा 90 – चोट के डर से दी गई सहमति सहमति नहीं है – तथ्य की गलत धारणा के तहत दी गई सहमति कानून की नजर में कोई सहमति नहीं है – लेकिन गलत धारणा घटना के समय के करीब होनी चाहिए।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

किसी अभियुक्त से पूछे गए प्रश्नों का महत्व। 313 प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए बुनियादी हैं – धारा 313 के तहत किसी आरोपी पर लागू नहीं की गई परिस्थितियों का इस्तेमाल उसके खिलाफ नहीं किया जा सकता है।

अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने कहा:

1. अभियोजक ने अपने बयान में अपनी उम्र के संबंध में पहले कहा कि घटना की तारीख पर वह सोलह वर्ष की थी और फिर खुद को सही करते हुए कहा कि वह तेरह वर्ष की थी। यद्यपि उसने आरोप लगाया कि जब वह स्कूल जा रही थी तो अपीलकर्ता ने चाकू की नोक पर उसकी लज्जा भंग की, लेकिन अभियोजक या उसके

माता–पिता P.W.5 और 6 द्वारा स्कूल का कोई नाम नहीं बताया गया है। स्कूल के पास कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि स्कूल रजिस्टर आदि जैसे दस्तावेजी सबूतों के आधार पर उम्र का प्रमाण क्यों नहीं दिया गया। पी.डब्ल्यू.10 ने जिरह में अभियोक्ता की उम्र लगभग पच्चीस वर्ष आंकी। अभियोक्ता के चचेरे भाई (भाई) पी.डब्लू.2, जिसकी उम्र लगभग 30 वर्ष है, ने गवाही दी कि वह उससे छह वर्ष छोटी थी। इस प्रकार अभियोक्ता की उम्र के संबंध में साक्ष्यों में व्यापक भिन्नता है। ट्रायल कोर्ट ने 18.08.2001 को गवाही में बताई गई उम्र के आधार पर अभियोक्ता की उम्र 20 वर्ष के आधार पर सामान्य नियम का पालन करते हुए उसे चौदह वर्ष की उम्र का माना। घटना की तारीख पर पीड़िता की उम्र के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा सकारात्मक साक्ष्य के अभाव में, तारीख पर उसकी उम्र अठारह वर्ष से अधिक होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। इसलिए संदेह का लाभ अपीलकर्ता को दिया जाना चाहिए। [पैरा 7][487–एच; 488–ए–डी]

2. धारा 313 सीआरपीसी के तहत अभियुक्त का परीक्षण। स्वभाव से बेहद अनौपचारिक और सहज था। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि सीआरपीसी की धारा 313 के तहत किसी आरोपी को परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़ता है। उसके विरुद्ध इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, और इसे विचार से बाहर रखा जाना चाहिए। एक आपराधिक मुकदमे में, किसी अभियुक्त से पूछे गए प्रश्नों का महत्व प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए बुनियादी है क्योंकि यह उसे न केवल अपना बचाव प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करता है, बल्कि उसके खिलाफ आपत्तिजनक परिस्थितियों की व्याख्या करने का भी अवसर प्रदान करता है। किसी अभियुक्त द्वारा उठाया गया संभावित बचाव उचित संदेह से परे सबूत की आवश्यकता के बिना आरोप का खंडन करने के लिए पर्याप्त है। [पैरा 8 और 9][488–ई, एच; 489–ए–बी]

नवल किशोर सिंह बनाम बिहार राज्य (2004) 7 एससीसी

502: [2004] 3 पूरक। एससीआर 344 – पर निर्भर।

3. अपीलकर्ता द्वारा किसी अन्य लड़की के साथ विवाह करने से सात दिन पहले उचित समय पर, अभियोजक से किए गए वादे के बहाने, एफआईआर दर्ज करने में चार साल की देरी, सच्चाई और सत्यता के बारे में गंभीर संदेह पैदा करती है। अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोप. अभियोजन पक्ष ने जिरह में स्वीकार किया कि 09.04.1999 को कोई घटना नहीं हुई थी, इस बात को ध्यान में रखते हुए मामले की पूरी उत्पत्ति गंभीर संदेह में है। [पैरा 10][490–ए–बी]

4.1. रिकॉर्ड पर साक्ष्य की प्रकृति के अनुसार यह कहना संभव नहीं है कि अपीलकर्ता ने शुरुआत में ही पीड़िता को किसी डर से डराकर उसकी सहमति प्राप्त कर ली थी। आईपीसी की धारा 90 के तहत चोट के डर से दी गई सहमति कानून की नजर में सहमति नहीं है। आईपीसी की धारा 90 के तहत, तथ्य की गलत धारणा के तहत दी गई सहमति कानून की नजर में कोई सहमति नहीं है। लेकिन तथ्य की ग़लतफ़हमी घटना के समय के करीब होनी चाहिए और इसे चार साल की अवधि में नहीं फैलाया जा सकता। इसे शायद ही किसी विस्तार से बताने की आवश्यकता है कि अपीलकर्ता की सहमति एक सचेत और सूचित विकल्प था जो उसने उचित विचार–विमर्श के बाद किया था, इसे विरोध न करने की एक सचेत सकारात्मक कार्रवाई के साथ लंबे समय तक फैलाया गया था। अभियोजक ने अपीलकर्ता को लिखे अपने पत्रों में यह भी उल्लेख किया है कि रिश्ते को लेकर उसके घर पर उसके परिवार के सदस्यों के साथ अक्सर झगड़े होते थे और उसे पीटा जाता था। वर्तमान मामले के तथ्यों में, अभियोजक का एकान्त बयान कि पहले कथित अपराध के समय चोट के डर से उसकी सहमति प्राप्त की गई थी, स्वीकार्य नहीं है। [पैरा 13,14][490–जी–एच; 491–ए–डी]

4.2 वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से पता चलता है कि अपीलकर्ता ने शादी का कोई झूठा वादा या जानबूझकर गलत बयानी नहीं की, जिससे दोनों पक्षों के बीच शारीरिक संबंध स्थापित हो सके। अभियोजक स्वयं विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के कारण उनके रिश्ते में आने वाली बाधाओं से अवगत थी। एक सगाई समारोह भी इस विश्वास के साथ आयोजित किया गया था कि सामाजिक बाधाएँ दूर हो जाएँगी, लेकिन दुर्भाग्य से इस बात पर भी मतभेद पैदा हो गए कि शादी चर्च में होगी या मंदिर में और अंततः असफल हो गई। उपलब्ध साक्ष्यों पर टिके रहना संभव नहीं है कि अपीलकर्ता का शुरू से ही अभियोक्ता से शादी करने का इरादा नहीं था और उसने केवल उसके साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए धोखे से गलत बयानी की थी। अभियोजक ने अपने पत्रों में स्वीकार किया कि अपीलकर्ता का परिवार हमेशा उसके लिए बहुत अच्छा था। [पैरा 18][492–एफ–एच]

4.3 इसलिए, अभियोक्ता की सहमति एक सचेत और सोच–समझकर की गई पसंद थी, जो एक अनैच्छिक कार्रवाई या इनकार से अलग थी और जो अवसर उसके लिए उपलब्ध था, क्योंकि अपीलकर्ता के प्रति उसके गहरे प्यार ने उसे स्वेच्छा से स्वतंत्रता की अनुमति दी थी। उसका शरीर, जो सामान्य मानव व्यवहार के अनुसार केवल उसी व्यक्ति को अनुमति देता है जिसके साथ वह गहराई से प्यार करता है। [पैरा 20][493–बी–सी]

> कैनी राजन बनाम केरल राज्य (2013) 9 एससीसी 113: [2013] 10 एससीआर 196; उदय बनाम कर्नाटक राज्य (2003) 4 एससीसी 46: [2003] 2 एससीआर 231; के. पी. थिमप्पा गौड़ा बनाम कर्नाटक राज्य (2011) 14 एससीसी 475: [2011] 4 एससीआर 200; ध्रुवराम मुरलीधर सोनार बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य एआईआर 2019 एससी 327: [2018] 13 एससीआर 920; प्रमोद सूर्यभान पवार बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2019) 9 एससीसी 608: [2019] 11 एससीआर 423 – पर भरोसा किया गया।

5. अपीलकर्ता को आईपीसी की धारा 420 और 504 के तहत आरोप से बरी कर दिया गया है। बरी किए जाने के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की गई है। आईपीसी की धारा 323 के तहत दोषसिद्धि को बरकरार रखने के लिए रिकॉर्ड पर कोई चिकित्सीय साक्ष्य नहीं है। अपीलकर्ता के खिलाफ आईपीसी की धारा 341 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है। पीड़िता के इस कथन पर विचार करते हुए कि वह अपनी इच्छा से 15 दिनों के लिए अपीलकर्ता के साथ रहने गई थी। इसलिए, अपीलकर्ता की दोषसिद्धि टिकाऊ नहीं है और उसे रद्द किया जाता है। अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जाता है। [पैरा 19 और 21][493–ए–बी, जी]&&& प्रकाश चंद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य (2019) 5 एससीसी 628: [2019] 3 एससीआर 953; विजयन बनाम केरल राज्य (2008) 4 एससीसी 763; दीपक गुलाटी बनाम हरियाणा राज्य (2013) 7 एससीसी 675 – संदर्भित।

केस कानून संदर्भ

[2019] 3 एससीआर 953 पैरा 5 को संदर्भित करता है

(2008) 4 एससीसी 763 पैरा 5 में संदर्भित

(2013) 7 एससीसी 675 पैरा 5 में संदर्भित

[2004] 3 पूरक। एससीआर 344 पैरा 9 पर निर्भर था

[2013] 10 एससीआर 196 पैरा 16 पर निर्भर था

[2003] 2 एससीआर 231 पैरा 16 पर निर्भर था

[2011] 4 एससीआर 200 पैरा 16 पर निर्भर थे

[2018] 13 एससीआर 920 पैरा 17 पर निर्भर था

[2019] 11 एससीआर 423 पैरा 17 पर निर्भर था

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2020 की आपराधिक अपील संख्या 635

2004 की सीआर.अपील (एस.जे.) संख्या 300 में झारखंड उच्च न्यायालय और&& के दिनांक 07.12.2018 के निर्णय और आदेश से।

श्रीमती वी. मोहना, वरिष्ठ अधिवक्ता, अनुप कुमार, सुश्री अंकिता शर्मा, सुश्री निकिता, वरुण नारंग, सुश्री प्रज्ञा बघेल, सुश्री पल्लवी लंगर, रितेश खरे, अधिवक्ता। उपस्थित पक्षों के लिए।

न्यायालय का **निर्णय नवीन सिन्हा, जे.** द्वारा सुनाया गया।

1. अनुमति स्वीकृत।

2. अपीलकर्ता ने भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में, "आईपीसी") की धारा 376, 323 और 341 के तहत अपनी दोषसिद्धि की आलोचना करते हुए उसे जुर्माना और एक डिफ़ॉल्ट शर्त के साथ क्रमशः सात साल, एक साल और एक महीने की सजा सुनाई।

3. अभियोक्ता, पीडब्लू9 ने 13.04.1999 को एफआईआर संख्या 25/1999 दर्ज की, जिसमें आरोप लगाया गया कि चार साल पहले अपीलकर्ता ने चाकू की नोक पर उसकी लज्जा भंग की थी। तब से वह उससे शादी करने का वादा करता रहा और इस बहाने उसके साथ पति–पत्नी की तरह शारीरिक संबंध बनाता रहा। वह उसके घर पर भी पंद्रह दिनों तक रुकी थी और इस दौरान भी उसने उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए। एफ.आई.आर. दर्ज करने से पांच दिन पहले, अपीलकर्ता ने 09.04.1999 को उसके साथ शारीरिक संबंध स्थापित किए थे। अपीलकर्ता ने उसे धोखा दिया था क्योंकि अब वह 20.04.1999 को किसी अन्य लड़की के साथ अपनी शादी करने जा रहा था। समझौते के सभी प्रयास विफल हो गए थे।

4. अतिरिक्त न्यायिक आयुक्त, रांची ने सबूतों पर विचार करने के बाद अपीलकर्ता को यह कहते हुए दोषी ठहराया कि जब अपीलकर्ता ने पहली बार चाकू की नोक पर उसके साथ बलात्कार किया था तब पीड़िता की उम्र 14 वर्ष थी। उसने उससे शादी करने का अपना वादा नहीं निभाया। उच्च न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए कहा कि अपीलकर्ता द्वारा अभियोजक को लिखे गए पत्र, साथ में उनकी तस्वीरें और अपीलकर्ता का बयान सीआरपीसी की धारा 313 के तहत दर्ज किया गया है। दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए पर्याप्त थे।

5. अपीलकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील श्रीमती वी. मोहना का कहना है कि चार साल की देरी से दर्ज की गई एफ.आई.आर. स्पष्ट रूप से बाद में सोची गई बात थी। आरोपों की पूरी उत्पत्ति अत्यधिक संदिग्ध और संदेहास्पद है क्योंकि अभियोजक ने अपनी जिरह में स्वीकार किया कि अपीलकर्ता ने 09.04.1999 को उसके साथ बलात्कार नहीं किया था। अपीलकर्ता द्वारा अभियोजक को लिखे गए पत्रों और उसके द्वारा

अपीलकर्ता को लिखे गए पत्रों को परीक्षण के दौरान प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया गया, जिससे समय के साथ उनके बीच गहरा प्रेम संबंध स्थापित हो गया। अभियोक्ता की उम्र लगभग 25 वर्ष थी, जैसा कि P.W.10, डॉक्टर ने बताया, जिसने 14.04.1999 को उसकी चिकित्सीय जांच की थी। अपीलकर्ता और अभियोक्ता के बीच शारीरिक संबंध उनके प्रेम संबंध के कारण सहमति से बने थे। इसलिए आईपीसी की धारा 375 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है। सीआरपीसी की धारा 313 के तहत अपीलकर्ता से पूछे गए प्रश्न। बहुत ही आकस्मिक और लापरवाह थे, जिसके कारण उन्हें बचाव के उचित अवसर से वंचित कर दिया गया, जिससे निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार से इनकार करके उनके प्रति गंभीर पूर्वाग्रह उत्पन्न हुआ। उनके बीच विवाह सामाजिक कारणों से नहीं हो सका क्योंकि अपीलकर्ता अनुसूचित जनजाति का था, जबकि अभियोक्ता ईसाई थी। **प्रकाश चंद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य,** (2019) 5 एससीसी 628, **विजयन बनाम केरल राज्य,** (2008) 4 एससीसी 763, **कैनी राजन बनाम केरल राज्य,** (2013) 9 एससीसी 113, **दीपक गुलाटी बनाम हरियाणा राज्य,** (2013) 7 एससीसी 675 और उदय बनाम कर्नाटक राज्य, (2003) 4 एससीसी 46.

6. राज्य की वकील सुश्री प्रज्ञा बघेल ने प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष मुकदमे के दौरान आरोपों पर कायम रहा। परीक्षण। एफआईआर दर्ज करने में देरी को समझौते के प्रयासों के विफल होने के कारण पर्याप्त रूप से समझाया गया है। पी.डब्लू. 7, अभियोक्ता की बहन ने भी पुष्टि की थी कि अपीलकर्ता ने चाकू की नोक पर उसका यौन उत्पीड़न किया था और वह रोती हुई घर आई थी। अपीलकर्ता ने अभियोजक को उसकी अनुपस्थिति में चुप रहने के लिए कहा था, जिससे पता चलता है कि उसके इरादे नेक नहीं थे। यह देखते हुए कि अभियोक्ता चौदह वर्ष की थी, सहमति से बने रिश्ते का बचाव अप्रासंगिक है। अपीलकर्ता ने केवल अभियोक्ता के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए शादी का झूठा वादा किया था। उनका शुरू से ही ऐसा कोई इरादा नहीं था और उन्होंने गलत बयानी करके अपीलकर्ता की सहमति प्राप्त की, जो कानून की नजर में कोई सहमति नहीं है। अभियोक्त्री का साक्ष्य विश्वसनीय है।

7. हमने पार्टियों की ओर से प्रस्तुतियों पर विचार किया है। अभियोक्ता ने अपने बयान में अपनी उम्र के संबंध में पहले तो कहा कि घटना की तारीख पर वह सोलह वर्ष की थी और फिर खुद को सही करते हुए कहा कि वह तेरह वर्ष की थी। यद्यपि उसने आरोप लगाया कि जब वह स्कूल जा रही थी तो अपीलकर्ता ने चाकू की नोक पर उसकी लज्जा भंग की, लेकिन अभियोजक या उसके माता–पिता P.W.5 और 6 द्वारा स्कूल का कोई नाम नहीं बताया गया है। स्कूल के पास कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि स्कूल रजिस्टर आदि जैसे दस्तावेजी सबूतों के आधार पर उम्र का प्रमाण क्यों नहीं दिया गया। पी.डब्ल्यू.10 ने जिरह में अभियोक्ता की उम्र लगभग पच्चीस वर्ष आंकी। अभियोक्ता के चचेरे भाई (भाई) पी.डब्लू.2, जिसकी उम्र लगभग 30 वर्ष है, ने गवाही दी कि वह उससे छह वर्ष छोटी थी। इस प्रकार अभियोक्ता की उम्र के संबंध में साक्ष्यों में व्यापक भिन्नता है। अतिरिक्त न्यायिक आयुक्त ने 18.08.2001 को गवाही में उसके द्वारा बताई गई उम्र 20 वर्ष के आधार पर सामान्य नियम का पालन करते हुए अभियोक्ता की उम्र चौदह वर्ष मानी। घटना की तारीख पर पीड़िता की उम्र के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा सकारात्मक साक्ष्य के अभाव में, तारीख पर उसकी उम्र अठारह वर्ष से अधिक होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। इसलिए संदेह का लाभ अपीलकर्ता को दिया जाना चाहिए।

8. सीआरपीसी की धारा 313 के तहत आरोपी से की गई पूछताछ का अवलोकन। इससे पता चलता है कि यह स्वभाव से बेहद अनौपचारिक और सहज है। अपीलकर्ता से केवल तीन कैप्सूल वाले प्रश्न पूछे गए थे जिनका उन्होंने खंडन किया:–

"प्रश्न 1. आपके विरुद्ध गवाह है कि जब सूचक वी.अंशुमाला तिग्गा स्कूल जा रही थी तो आप तोमरा नहर के पास छुपे हुए थे और सूचक को एकांत में पाकर आपने उसे चाकू की नोक पर नग्न करने के लिए मजबूर किया और उसके साथ बलात्कार किया।

प्रश्न 2. बलात्कार के बाद जब सूचक अपने माता–पिता को घटना के बारे में बताने के लिए रोती हुई अपने घर भागी और जब सूचक के माता–पिता घटना के बारे में पूछने के लिए आपके पास आए, तो आपने उनसे कहा कि "यदि मैंने बलात्कार किया है तो मैं उसे अपनी पत्नी बनाकर रखूंगा"।

प्रश्न 3. आपके निर्देश पर, सूचक के माता–पिता ने सूचक का "लोटा पानी" समारोह आयोजित किया, जिसमें सूचक के साथ–साथ आपके माता–पिता भी उपस्थित थे, उक्त समारोह में आपके माता–पिता ने सूचक को एक साड़ी और एक ब्लाउज और सूचक के माता–पिता को उपहार दिया था। तुम्हें कुछ कपड़े भी तोहफे में दिये थे"

9. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि सीआरपीसी की धारा 313 के तहत किसी आरोपी को परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़ता है। उसके विरुद्ध इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, और इसे विचार से बाहर रखा जाना चाहिए। एक आपराधिक मुकदमे में, किसी अभियुक्त से पूछे गए प्रश्नों का महत्व प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए बुनियादी है क्योंकि यह उसे न केवल अपना बचाव प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करता है, बल्कि उसके खिलाफ आपत्तिजनक परिस्थितियों की व्याख्या करने का भी अवसर प्रदान करता है। किसी अभियुक्त द्वारा उठाया गया संभावित बचाव उचित संदेह से परे सबूत की आवश्यकता के बिना आरोप का खंडन करने के लिए पर्याप्त है। इस न्यायालय ने बार–बार सीआरपीसी की धारा 313 के तहत आरोपी से सभी प्रासंगिक प्रश्न पूछने के महत्व पर जोर दिया है। **नवल किशोर सिंह बनाम बिहार राज्य,** (2004) 7 एससीसी 502 में, इसे निष्पक्ष सुनवाई का एक अनिवार्य हिस्सा माना गया था, जो इस प्रकार था:–

"5... ... धारा 313 सीआरपीसी के तहत आरोपी से पूछताछ की गई थी। सबसे असंतोषजनक तरीका. सीआरपीसी की धारा 313 के तहत आरोपी को उसके खिलाफ साक्ष्य में सामने आने वाली किसी भी परिस्थिति को स्पष्ट करने का अवसर दिया जाना चाहिए था। कम से कम, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए विभिन्न साक्ष्यों को आरोपी के समक्ष प्रश्नों के रूप में रखा जाना चाहिए था और उसे अपना स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया जाना चाहिए था। मौजूदा मामले में आरोपी को ऐसा कोई अवसर नहीं दिया गया। हम आरोपी के खिलाफ सभी सबूतों को एक ही प्रश्न में एक साथ रखने और उसे समझाने का अवसर देने की प्रथा की निंदा करते हैं, क्योंकि आरोपी तर्कसंगत और बुद्धिमान स्पष्टीकरण देने की स्थिति में नहीं हो सकता है। ट्रायल जज को साक्ष्य में प्रतिकूल परिस्थितियों को समझाने के लिए अभियुक्त को अवसर देने के महत्व को ध्यान में रखना चाहिए था और धारा 313 की परीक्षा को एक खाली औपचारिकता के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। संपूर्ण साक्ष्य सामने आने के बाद ही आरोपी अपना बचाव स्पष्ट करने और अपने खिलाफ साक्ष्य में सामने आने वाली परिस्थितियों के बारे में स्पष्टीकरण देने की स्थिति में होगा। अभियुक्त को दिया गया ऐसा अवसर निष्पक्ष सुनवाई का हिस्सा है और अगर यह लापरवाही से किया जाता है, तो इसके परिणामस्वरूप साक्ष्य की अपूर्ण सराहना हो सकती है... "

10. अपीलकर्ता अनुसूचित जनजाति से था जबकि अभियोक्ता ईसाई समुदाय से थी। वे एक पारंपरिक समाज में विभिन्न धार्मिक मान्यताओं को मानते थे। वे दोनों एक ही गांव बसजादी के रहने वाले थे और एक दूसरे

को जानते थे. आरोपों की प्रकृति और तरीके, उनके बीच आदान–प्रदान किए गए पत्रों के साथ, जिन्हें परीक्षण के दौरान प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया गया, यह स्पष्ट करता है कि एक–दूसरे के लिए उनका प्यार पर्याप्त समय में बढ़ा और परिपक्व हुआ। वे दोनों एक–दूसरे से मोहित हो गए थे और जवानी का जुनून उनके दिमाग और भावनाओं पर हावी हो गया था। इसके बाद जो शारीरिक संबंध बने वे प्रकृति में अलग–थलग या छिटपुट नहीं थे, बल्कि वर्षों से नियमित थे। अभियोक्त्री अपीलार्थी के घर में जाकर रहने भी लगी थी। हमारी राय में, अपीलकर्ता द्वारा किसी अन्य लड़की के साथ अपनी शादी करने से सात दिन पहले उचित समय पर, अभियोजक से किए गए वादे के बहाने, एफआईआर दर्ज करने में चार साल की देरी सच्चाई और सत्यता के बारे में गंभीर संदेह पैदा करती है। अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोपों के बारे में। अभियोजन पक्ष ने जिरह में स्वीकार किया कि 09.04.1999 को कोई घटना नहीं हुई थी, इस बात को ध्यान में रखते हुए मामले की पूरी उत्पत्ति गंभीर संदेह में है।

11. अभियोक्त्री के माता–पिता, पी.डब्ल्यू. 5 और 6 दोनों ने अपीलकर्ता और अभियोजक के बीच संबंधों के बारे में जागरूकता को स्वीकार किया और उन्हें पहली घटना के बाद ही सूचित किया गया था, लेकिन कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया कि उन्होंने मामले की तुरंत पुलिस को रिपोर्ट क्यों नहीं की। इसके विपरीत, पी.डब्लू. 5 स्वीकार करता है कि अपीलकर्ता ने मंदिर में शादी करने पर जोर दिया, जिससे वे सहमत नहीं थे और चाहते थे कि शादी चर्च में संपन्न हो। उन्होंने आगे स्वीकार किया कि अपीलकर्ता और अभियोक्ता एक–दूसरे से प्यार करते थे। अभियोक्त्री के दावे के विपरीत, पी.डब्लू. 6 में कहा गया कि अभियोक्ता के साथ उसके ही घर में यौन उत्पीड़न किया गया।

12. अभियोक्ता ने स्वीकार किया कि एक सगाई समारोह भी आयोजित किया गया था। उन्होंने आगे कहा कि उनके बीच विवाह संपन्न नहीं हो सका क्योंकि वे अलग–अलग धर्मों के थे। इसलिए वह इस बाधा के प्रति सदैव सचेत रही, यहां तक कि जब उसने अपीलकर्ता के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करना जारी रखा। यदि अपीलकर्ता ने उससे शादी की होती तो वह मामला दर्ज नहीं कराती। उसने बचाव पक्ष द्वारा रिकॉर्ड पर रखे गए सबूतों के विपरीत, अपीलकर्ता को कोई पत्र लिखने से इनकार किया। पत्रों के आदान–प्रदान में दोनों द्वारा इस्तेमाल की गई कामुक भाषा यह दर्शाती है कि अपीलकर्ता रिश्ते को लेकर गंभीर था और इसे शादी में परिणित करना चाहता था। लेकिन दुर्भाग्य से सामाजिक कारणों से, शादी नहीं हो सकी क्योंकि वे अलग–अलग समुदायों से थे।

13. हमारे विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या अपीलकर्ता द्वारा विवाह के वादे के संबंध में तथ्य की किसी गलत धारणा के तहत अभियोजक ने शारीरिक संबंध के लिए सहमति दी थी या उसकी सहमति विवाह की धोखाधड़ी वाली गलत बयानी पर आधारित थी जिसे अपीलकर्ता ने कभी भी बनाए रखने का इरादा नहीं किया था। रिश्ते की शुरुआत ही. यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उसने जानबूझकर शुरू से ही कपटपूर्ण गलत बयानी की और अभियोजक ने तथ्य की गलत धारणा पर अपनी सहमति दी, तो आईपीसी की धारा 375 के तहत बलात्कार का अपराध स्पष्ट रूप से बनता है। रिकॉर्ड पर साक्ष्य की प्रकृति में यह मानना संभव नहीं है कि अपीलकर्ता ने शुरुआत में उसे किसी डर में डालकर उसकी सहमति प्राप्त की थी। आईपीसी की धारा 90 के तहत चोट के डर से दी गई सहमति कानून की नजर में सहमति नहीं है। वर्तमान मामले के तथ्यों में हम अभियोजक के अकेले बयान को स्वीकार करने के लिए राजी नहीं हैं कि पहले कथित अपराध के समय चोट के डर से उसकी सहमति प्राप्त की गई थी।

14. आईपीसी की धारा 90 के तहत, तथ्य की गलत धारणा के तहत दी गई सहमति कानून की नजर में कोई सहमति नहीं है। लेकिन तथ्य की ग़लतफ़हमी घटना के समय के करीब होनी चाहिए और इसे चार साल की अवधि में नहीं फैलाया जा सकता। इसे शायद ही किसी विस्तार से बताने की आवश्यकता है कि अपीलकर्ता की सहमति एक सचेत और सूचित विकल्प था जो उसने उचित विचार–विमर्श के बाद किया था, इसे विरोध न करने की एक सचेत सकारात्मक कार्रवाई के साथ लंबे समय तक फैलाया गया था। अभियोजक ने अपीलकर्ता को लिखे अपने पत्रों में यह भी उल्लेख किया है कि रिश्ते को लेकर उसके घर पर उसके परिवार के सदस्यों के साथ अक्सर झगड़े होते थे और उसे पीटा जाता था।

15. **उदय** (सुप्रा) में, अपीलकर्ता और अभियोजक एक ही पड़ोस में रहते थे। चूंकि वे अलग–अलग जातियों के थे, इसलिए वैवाहिक संबंध फलीभूत नहीं हो सका, जबकि विवाह की सहमति और आश्वासन पर उनके बीच शारीरिक संबंध बने रहे। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

> "21. इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायिक राय की सर्वसम्मति इस दृष्टिकोण के पक्ष में है कि जिस व्यक्ति के साथ वह गहराई से प्यार करती है उसके साथ यौन संबंध बनाने के लिए अभियोक्ता द्वारा इस वादे पर दी गई सहमति कि वह उससे बाद की तारीख में शादी करेगा, नहीं दी जा सकती। तथ्य की ग़लतफ़हमी के तहत दिया गया कहा जाता है। संहिता के अर्थ के अंतर्गत झूठा वादा कोई तथ्य नहीं है। हम इस दृष्टिकोण से सहमत हैं, लेकिन हमें यह जोड़ना होगा कि यह निर्धारित करने के लिए कोई स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला नहीं है कि क्या अभियोजक द्वारा संभोग के लिए दी गई सहमति स्वैच्छिक है, या क्या यह तथ्य की गलत धारणा के तहत दी गई है। अंतिम विश्लेषण में, अदालतों द्वारा निर्धारित परीक्षण सहमति के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायिक दिमाग को सर्वोत्तम मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, लेकिन अदालत को, प्रत्येक मामले में, किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले अपने सामने मौजूद सबूतों और आसपास की परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए। , क्योंकि प्रत्येक मामले के अपने विशिष्ट तथ्य होते हैं जो इस सवाल पर असर डाल सकते हैं कि क्या सहमति स्वैच्छिक थी, या तथ्य की गलत धारणा के तहत दी गई थी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सबूतों को भी तौलना चाहिए कि अपराध के प्रत्येक घटक को साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर है, सहमति का अभाव उनमें से एक है।"

16. उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता ने अपने बचाव में **कैनी राजन** (सुप्रा) पर भरोसा किया। तथ्य वर्तमान मामले के समान थे। दोनों पक्षों के बीच शारीरिक संबंध शादी के वादे की बुनियाद पर स्थापित किए गए थे। इस अदालत ने आईपीसी की धारा 376 के तहत दोषसिद्धि को भी रद्द कर दिया और **के.पी. थिमप्पा गौड़ा बनाम कर्नाटक राज्य,** (2011)14 एससीसी 475। दुर्भाग्य से, उच्च न्यायालय ने इससे निपटना भी आवश्यक नहीं समझा, यदि संभव हो तो इसमें अंतर करना तो दूर की बात है। यह वास्तव में दुर्भाग्यपूर्ण है कि एक वरिष्ठ न्यायालय की न्यायिक मिसाल का हवाला दिए जाने के बावजूद, उच्च न्यायालय ने केवल तथ्यों और संबंधित तर्कों को पढ़ने के बाद, एक पैराग्राफ में गुप्त रूप से राय दी कि सबूतों की प्रकृति में, पत्र, तस्वीर अभियोक्ता के साथ अपीलकर्ता और सीआरपीसी की धारा 313 के तहत अपीलकर्ता के बयान के अनुसार, उसकी दोषसिद्धि और सजा में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

17. यह अदालत हाल ही में **ध्रुवराम मुरलीधर सोनार बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य,** एआईआर 2019 एससी 327 और **प्रमोद सूर्यभान पवार बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य,** (2019) 9 एससीसी 608 में धारा 482 सीआर के तहत एक आवेदन से उत्पन्न हुई। .पी.सी. ऐसी ही परिस्थितियों में जहां रिश्ता प्रेम संबंध से

उत्पन्न हुआ था, समय के साथ शारीरिक संबंधों के साथ विकसित हुआ, प्रकृति में सहमति थी, लेकिन विवाह फलित नहीं हो सका क्योंकि दोनों पक्ष अलग–अलग जातियों और समुदायों से थे, कार्यवाही को रद्द कर दिया।

18. हमने वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचारपूर्वक विचार किया है और हमारी सुविचारित राय है कि अपीलकर्ता ने शादी का कोई झूठा वादा या जानबूझकर गलत बयानी नहीं की, जिससे दोनों पक्षों के बीच शारीरिक संबंध स्थापित हुए। अभियोजक स्वयं विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के कारण उनके रिश्ते में आने वाली बाधाओं से अवगत थी। एक सगाई समारोह भी इस विश्वास के साथ आयोजित किया गया था कि सामाजिक बाधाएं दूर हो जाएंगी, लेकिन दुर्भाग्य से इस बात पर भी मतभेद पैदा हो गए कि शादी चर्च में होगी या मंदिर में और अंततः असफल हो गई। उपलब्ध सबूतों पर टिके रहना संभव नहीं है कि अपीलकर्ता का शुरू से ही अभियोक्ता से शादी करने का इरादा नहीं था और उसने केवल उसके साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए धोखे से गलत बयानी की थी। अभियोजक ने अपने पत्रों में स्वीकार किया कि अपीलकर्ता का परिवार हमेशा उसके लिए बहुत अच्छा था।

19. अपीलकर्ता को आईपीसी की धारा 420 और 504 के तहत आरोप से बरी कर दिया गया है। बरी किए जाने के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की गई है। आईपीसी की धारा 323 के तहत दोषसिद्धि को बरकरार रखने के लिए रिकॉर्ड पर कोई चिकित्सीय साक्ष्य नहीं है। अपीलकर्ता के खिलाफ आईपीसी की धारा 341 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है। पीड़िता के इस कथन पर विचार करते हुए कि वह अपनी इच्छा से 15 दिनों के लिए अपीलकर्ता के साथ रहने गई थी।

20. हमें यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अभियोक्ता की सहमति एक सचेत और विचार–विमर्श की गई पसंद थी, जो एक अनैच्छिक कार्रवाई या इनकार से अलग थी और अपीलकर्ता के प्रति उसके गहरे प्रेम के कारण उसे यह अवसर उपलब्ध था। स्वेच्छा से उसे अपने शरीर के साथ स्वतंत्रता की अनुमति देना, जो सामान्य मानव व्यवहार के अनुसार केवल उस व्यक्ति को ही अनुमति है जिसके साथ वह गहराई से प्यार करता है। **उदय** (सुप्रा) में इस संबंध में टिप्पणियों को प्रासंगिक माना जाता है:

> "25... यह आमतौर पर ऐसे मामलों में होता है, जब दो युवा व्यक्ति प्यार में पागल होते हैं, कि वे एक–दूसरे से कई बार वादा करते हैं कि चाहे जो भी हो, वे शादी करेंगे। . जैसा कि अभियोजक ने कहा, अपीलकर्ता ने भी एक से अधिक अवसरों पर ऐसा वादा किया था। ऐसी परिस्थितियों में वादे का कोई महत्व नहीं रह जाता है, खासकर तब जब वे भावनाओं और जुनून से अभिभूत हो जाते हैं और खुद को ऐसी स्थितियों और परिस्थितियों में पाते हैं, जहां वे एक कमजोर क्षण में, यौन संबंध बनाने के प्रलोभन का शिकार हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस मामले में भी ऐसा ही हुआ है, और अभियोजक ने स्वेच्छा से अपीलकर्ता के साथ यौन संबंध बनाने की सहमति दी, जिसके साथ वह बहुत प्यार करती थी, इसलिए नहीं कि उसने उससे शादी करने का वादा किया था, बल्कि इसलिए कि वह भी यही चाहती थी। इन परिस्थितियों में अपीलकर्ता को यह ज्ञान देना बहुत मुश्किल होगा कि अभियोजक ने अपने वादे से उत्पन्न तथ्य की गलत धारणा के परिणामस्वरूप सहमति दी थी। किसी भी स्थिति में, अपीलकर्ता के लिए यह जानना संभव नहीं था कि सहमति देते समय अभियोक्ता के मन में क्या था, क्योंकि सहमति देने के लिए उसके पास एक से अधिक कारण थे।"

21. निष्कर्ष में, हम अपीलकर्ता की सजा को अस्थिर पाते हैं और उसे खारिज करते हैं। अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जाता है। जब तक किसी अन्य मामले में वांछित न हो, उसे तुरंत रिहा करने का निर्देश दिया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है.

आशीष तिवारी द्वारा अनुवादित।